सम्मेलन में बोलतीं शीमा किरमानी

नृत्यकला बदलाव का एक सशक्त माध्यम है

शीमा किरमानी

शीमा किरमानी पाकिस्तान की मशहूर नाट्य कार्यकर्ता, प्रशिक्षित नृत्यांगना और नृत्य निर्देशिका हैं जिन्होंने अमन व महिला अधिकारों पर एक लम्बे अर्से तक काम किया है। शीमा का जन्म 1951 में रावलपिंडी में हुआ था। उनके वालिद बाराबंकी लखनऊ के एक जागीरदार परिवार से थे और उनकी वालिदा दख्खिन हैदराबाद के न्यायधीश की बेटी हैं। शीमा के पिता ने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय से अपनी शिक्षा हासिल की और फ़ौज में भर्ती हो गए। सन 1947 के विभाजन के बाद उन्होंने पाकिस्तानी फौज में नौकरी की जहां वे अपने पूरी उम्र काम करने के बाद ब्रिगेडियर के पद पर सेवानिवृत हुए। शीमा के पिता ने 1949 में भारत आकर निकाह किया और फिर करांची में बस गए।

शीमा अपने माता-पिता की मंझली संतान हैं। अपने पिता की नौकरी और माता के परिवार के भारत में बसे होने के कारण शुरूआत से ही शीमा को भारत और पाकिस्तान के लोगों संस्कृति और तहज़ीब से अच्छा परिचय रहा। अपनी हैदराबाद की यात्रा के दौरान ही उनकी पहचान भारतीय शास्त्रीय नृत्य-संगीत से हुई। उनके पिता को पश्चिमी शास्त्रीय संगीत का शौक था लिहाज़ा छोटी उम्र से ही शीमा का रूझान कला की ओर बन गया।

शीमा के माता-पिता ने भी नृत्य, संगीत, नाट्य कला के प्रति उनके लगाव को प्रोत्साहन दिया। अपने सफ़र के दौरान पूरा परिवार नई-नई जगहों पर स्थित म्यूज़ियम, नाट्य कार्यक्रमों और कला केन्द्रों के बारे में जानता और कार्यक्रमों का लुत्फ़ उठाता। अपने बचपन की इन्हीं खुशनुमा यादों को शीमा ने अपनी परवरिश और तालीम का अभिन्न हिस्सा माना है।

अपने बढ़ते हुए सालों में शीमा को खेलकूद में कोई दिलचस्पी नहीं थी। चूंकि वे एक तंदरुस्त लड़की थीं लिहाज़ा उनकी मां ने वज़न कम करने के इरादे से उन्हें नृत्य कक्षाओं में भेजना शुरू कर दिया। अपनी पढ़ाई पूरी करने के लिए शीमा विदेश भी गईं जहां कला के प्रति उनकी लगन बरकरार रही। पाकिस्तान वापस लौटने पर उन्होंने गंभीरता से नृत्य का प्रशिक्षण लेना शुरू किया जिसके लिए वे भारत आईं।

उस दौरान पाकिस्तान का राजनैतिक माहौल महिलाओं के पक्ष में नहीं था। जनरल जिआ-उल-हक़ ने शास्त्रीय नृत्य पर पाबंदी लगा दी थी और कई इस्लामी महिला-विरोधी क़ानून भी लागू कर दिए थे। इसी के चलते अपरम्परागत

और विद्रोही सोच वाली शीमा किरमानी ने नृत्य को अपना पेशा बनाने का फ़ैसला कर लिया।

अपने कॉलेज के दिनों से ही शीमा को पढ़ने और वाद-विवाद करने का शौक था। मार्क्सवादी सिद्धांतों और नारीवाद के प्रभाव के कारण उनकी सोच और नज़रिया समानता, भेदभाव रहित और शोषण से मुक्त माहौल में रहने और काम करने के लिए प्रेरित कर रहा था। 1970 में उन्होंने *तहरीक़-ए-निस्वां* यानी 'औरतों का आन्दोलन' नाम की एक संस्था की शुरूआत की। *तहरीक़* एक सांस्कृतिक समूह के रूप में काम करती है और महिला अधिकार, मानवाधिकार, अमन के ज़रिए औरतों के जीवन को बेहतर बनाने की दिशा में अपना योगदान देती है।

तहरीक़ के सदस्यों का मानना है कि महिलाओं का आंदोलन एक सांस्कृतिक संघर्ष है जिसे आगे ले जाने के लिए सांस्कृतिक माध्यमों का इस्तेमाल करते हुए धार्मिक कट्टरवाद और रूढ़िवादिता को चुनौती देनी होगी। महिलाओं और पुरुषों के बीच बराबरी लाने के लिए मौजूदा मूल्यों और सत्ता संबंधों में बदलाव लाना होगा जिसके लिए कला और कविता से लोगों के दिलों तक पहुंचना ज़रूरी है। *तहरीक़* के कार्यकर्ता इस सोच का अनुसरण करते हुए कला और कविता के माध्यम से अपने समान हक़ों के संदेश लोगों तक पहुंचाते हैं।

इस तरह शीमा किरमानी का नृत्य और नाट्य के लिए जुनून महिला आंदोलन और न्याय के संघर्ष को अहम हिस्सा बन गया है। उनका मानना है कि कला के बिना राजनीति मुमकिन नहीं है।

सभी फ़ोटो- शीमा किरमानी

शास्त्रीय नृत्य की मुद्रा

अपनी कला के बारे में शीमा का मत है कि नृत्य एक ऐसा खूबसूरत माध्यम है जो व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों स्तरों पर सदभाव और प्यार लाने को ताक़त रखता है। वे कहती हैं— "मेरे ख़याल से पाकिस्तान में बढ़ती हिंसा का कारण यह है कि युवाओं के पास अपनी अभिव्यक्ति के कोई तरीक़े मौजूद नहीं हैं। नृत्य एक बेहद सशक्त माध्यम है क्योंकि उसमें सच्चाई की ताक़त निहित है। जब एक औरत आत्म-विश्वास और गरिमा के साथ स्टेज पर खड़ी होती है तो वह सबको कह रही है कि मुझे तुमसे कोई खौफ़ नहीं है, मैं अपने शरीर पर फ़क्र करती हूं। यह वो ताक़त का जज़्बा है जिसके सरकारें डरती हैं और इसलिए वे नृत्य को पसंद नहीं करते और मैंने इस वजह से नृत्यकला का चुनाव किया है।"

पाकिस्तान में कला और औरतें दोनों ही सैन्य तानाशाही का शिकार हुए हैं। राज्य द्वारा बनाए गए क़ानूनों में औरतों की यौनिकता और नैतिकता पर अंकुश लगाए हैं। राजकीय पक्ष औरतों के लिबास, उनकी आवाजाही, उनकी यौनिकता और सार्वजनिक जगहों पर उनकी मौजूदगी पर नज़रें गढ़ाए रहते हैं। धर्म के नाम पर बनाए *हुदूद अधिनियम* और *व्यभिचार क़ानून* औरतों को कमतर और दोयम दर्जा प्रदान करते हैं। इन क़ानूनों में दो औरतों की गवाही एक पुरुष की गवाही के बराबर मानी जाती है। कुछ क़ानूनों में तो औरत को गवाही देने का अधिकार ही नहीं है।

इस परिप्रेक्ष्य में शीमा किरमानी और उनके जैसी तमाम औरतें अपने काम के ज़रिए इन अन्यायी क़ानूनों की मुखालफ़त कर रही हैं। उनका मानना है कि पाकिस्तानी समाज में औरतों के दर्जे को बेहतर बनाने के लिए समाज और राज्य की सोच और नज़रिए में बुनियादी बदलाव लाना ज़रूरी है और यह काम संस्कृति और कला को बेहतर बनाकर ही किया जा सकता है।

शीमा किरमानी *पाकिस्तान की मशहूर नृत्यांगना, कार्यकर्ता और शिक्षिका हैं। यह लेख शीमा ने खुद लिखा है।*